सुरक्षा प्रदान की जाए। इसलिए इस्लामी कानून के अंतर्गत लोगों पर एक-दूसरे के अधिकार हैं और वे उसके ज़िम्मेदार हैं, उदाहरण के तौर पर अगर एक अंधा गड्ढे में गिर कर मर जाता है और आप उसको रोकने की स्थिती में हैं तो इसकी ज़िम्मेदारी आप पर होगी।

यहाँ तक कि युद्ध के समय में भी, इस्लाम यह आदेश देता है कि युद्धभूमी में अपने दुश्मन से भी भलमनसी से पेश आओ। इस्लाम ने शत्रु देश के लड़ाकु और गैर-लड़ाकु लोगों के बीच एक स्पष्ट लकीर खींच दी है। जहाँ तक गैर-लड़ाकू लोगों का प्रश्न है जिनमें औरतें, बच्चे, वृद्ध एवं लाचार शामिल हैं के बारे में पैगम्बर मुहम्मद (स०) का स्पष्ट आदेश है कि, "किसी बूढ़े को कत्ल न करो, और न ही बच्चों या औरतों को। मठों में रहने वाले सन्यासियों को कत्ल न करो।" एक युद्ध के दौरान पैगम्बर मुहम्मद (स०) ने किसी औरत की लाश देखी जो ज़मीन पर पड़ी हुई थी, तो आप (स०) ने कहा "यह तो नहीं लड़ रही थी फिर इसे क्यों मारा गया?" अत: इस्लामी रियासत न लड़नेवालों को संरक्षण देगी है फिर चाहे युद्ध ही क्यों न जारी हो।

आस्था की आज़ादी

प्रचलित गलतफहमी के विपरीत, एक वास्तविक इस्लामी रियासत की यह ज़िम्मेदारी है कि वह न सिर्फ दूसरे धर्म के मानने वालों का आदर करे बल्कि उनको सुरक्षा भी प्रदान करे। इसीलिए इस्लामी रियासत में रहने वाले गैर-मुस्लिमों को अपने धर्म के अनुसार रहने की पूरी छूट है।

"जब स्पेन मुस्लिम साम्राज्य का हिस्सा था तब इसका शहर कुर्तबा "युरोप का बौद्धिक केंद्र" कहलाता था जहाँ छात्र, मुस्लिम, इसाई तथा यहूदी विद्वानों से दर्शनशास्त्र, विज्ञान और औषधि की शिक्षा प्राप्त करते थे। इस धनी और परिष्कृत समाज ने दूसरे धर्मों के प्रति हमेशा खुला नज़रिया रखा। जहाँ बाकी युरोप में इस प्रकार की सहिष्णुता का कोई पता न था। वहीं मुस्लिम स्पेन में हज़ारों इसाई और यहूदी अपने मुस्लिम अधिपतियों के साथ सुखी एवं शांतीमय जीवन व्यतीत कर रहे थे।"

(बुर्के, १९८५, पृ:३८)

जीवन के बुनियादी मानकों का अधिकार

जीवन के बुनियादी मानकों में से न्यूनतम ज़रूरतों में खाना, कपड़ा, छत तथा चिकित्सा साधनों का होना आवश्यक है। अगर कोई भी इन बुनियादों ज़रूरतों के आभाव में जीवन व्यतीत कर रहा है तो उसे हर मुमकिन सहायता पहुँचाने की ज़रूरत है। और यह हर मुसलमान की ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी पूंजी में से पर्याप्त धन ऐसे लोगों को दे ताकि समाज से गरीबी को दूर किया जा सके। पवित्र कुरआन में है;

"और उनके माल में माँगने वालों का तथा सवाल करने से बचने वालों (हाथ न फैलाने वालों) का हक था।" (५१:१९)

इंसाफ का अधिकार

इस्लाम यह चाहता है कि मुसलमान एक पवित्र चरित्र का नमूना पेश करते हुए लोगों के साथ इंसाफ का मामला करे फिर चाहे वे किसी भी धर्म, जाती या समुदाय से हों, चाहे दोस्त हों या दुश्मन। पवित्र कुरआन कहत है;

"हे ईमानवालो! अल्लाह के लिए इन्साफ पर मज़बूती के साथ कायम रहने वाले बनो इन्साफ की गवाही देते हुए और ऐसा न हो कि किसी गरोह की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम इन्साफ करना छोड़ दो।" (५:८)

सरोजनी नायडू का कहना है "इस्लाम में इंसाफ की भावना का जो पहलु है वह इसके महान आदर्शों में से एक है, क्योंकि, मैने कुरआन में पढ़ा है, और मैने जीवन के इन महान सिद्धांतों को ऐसा पाया जो कि दैनिक जीवन के लिए रहस्यमयी नहीं बल्कि व्यावहारिक हैं और सारी दुनिया के लिए उत्कृष्ट नमूना हैं। (लेक्चर 'दि आइडियल ऑफ इस्लाम" देखें सरोजनी नायडू के भाषण और लेखन, मद्रास, १९१८, पृ:१६७)

अधिकार एवं आपसी ज़िम्मेदारी

अब तक कि बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस्लामी कानून हर एक मनुष्य के लिए खुदा की ओर से स्थापित किए गए दिव्य आदेश हैं जो हर व्यक्ति को उसकी विशिष्ट भूमिका प्रदान करता है। यह अधिकार पती-पत्नी, मात-पिता, संतान, रिश्तेदार, पड़ोसी, दोस्त यहाँ तक कि दुश्मन के भी हो सकते हैं। इन अधिकारों एवं ज़िम्मेदारियों को नियुक्त करने में इस्लाम ने सामाजिक, जातीवादी, लैंगिक तथा सांप्रदायिक मुद्दों को भी ध्यान में रखा है जो आज दुनिया के नाक में दम हैं। हालांकि अभी तक इसे पूर्ण रूप से लागू करने में दुनिया जिनमें मुस्लिम राष्ट्र भी शामिल हैं बहुत पीछे है। इस्लाम के द्वारा स्थापित अधिकारों एवं ज़िम्मेदारियों का ढाँचा व्यक्तिगत एवं सामाजिक सुधार की ज़बरदस्त क्षमता रखता है।

इंसानी मूल्यों को जानने एवं दिव्य मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए पवित्र कुरआन का अध्ययन करें। अपनी भाषा में मुफ्त प्राप्त करने के लिए हमसे संपर्क करें:

९९२०९५५५९७ / ९९२०३७०६५९

albirr.foundation@gmail.com | www.albirr.in

इस्लाम के मानवाधिकार

हम एक ऐसे युग में जी रहे हैं जो कि अपने में अभूतपूर्व तकनीकी परिष्कार रखता है।

दुर्भाग्यवश, पक्षपात एवं अन्याय के जिस अध्याय को मानव इतिहास ने लिखा है वो अबतक चला आ रहा है, निस्संदेह इससे मानवता को अनगिनत पीड़ाएं झेलनी पड़ी है। इसी लिए मानवाधिकार के विषय को गंभीरता से लेने की आवश्यकता पड़ी। मानवाधिकार कैसे बनते हैं? क्या हम इन अधिकारों को समझने के लिए आम सहमती प्राप्त कर सकते हैं और इसी तरह हम उन अधिकारों को दुनियाभर के समाजों पर लागू कर सकते हैं? यह ऐसे सवाल हैं जो कि ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के मुख्य विषय बने रहे हैं, जैसे कि दि मैग्ना कार्टा, दि फ्रेंच डिक्लेरेशन ऑफ दि राईट्स ऑफ मैन, दि अमेरिकन बिल ऑफ राईट और दि जेनेवा कनवेंशन

अक्सर इस बात की अनदेखी भी की गई है कि कई धर्मों ने भी इसी तरह के प्रश्नों को उठाया है। इस्लामी तंत्र, मानवाधिकार के इन उसूलों को गंभीरता से लेता है तथा इसके मत और आधुनिक युग की ज़रुरतों को भी मानता है।

यदि हमें मानवाधिकार में इस्लाम के सराहनीय योगदान को समझना है तो दुनिया के इतिहास की पृष्ठभूमी तथा आधुनिक समय की वास्तविकता का तुलनात्मक अध्ययन करना होगा। सामाजिक, जातीय, लैंगिक एवं धार्मिक अन्याय का दौर तो हमेशा से रहा है। आर्थिक एवं सामाजिक असमानताएं निचली जातियों के शोषण का कारण बनी, जातीय पक्षपात ने अश्वेतों को अधीन तथा दास बनने पर मजबूर किया, औरतों को अंधराष्ट्रीय नज़रिये के अंतर्गत दबाया और उनका शोषण किया गया, धार्मिक श्रेष्ठता के व्यापक रवैये के कारण दूसरे धर्मों का बड़े पैमाने पर उत्पीड़न किया गया। जब इस्लाम और मानवाधिकार की बात की जाती है तो इस चीज़ को ध्यान में रखना चाहिये कि लिखित तौर पर निर्धारित किये गये अधिकारों और दोषपूर्ण व्यक्तियों द्वारा इनके गलत व्याख्या या दुष्प्रयोग में बहुत बड़ा अंतर है। जैसा कि पश्चिमी समाज आज तक जातीवाद तथा भेद-भाव से लड़ रहा है, वहीं मुस्लिम समाज मानवाधिकार को पूर्ण रूप से लागू करने की कोशिश करता है।

दिव्य आदेश

इस्लामी मानवाधिकार की एक खास बात यह है कि यह अधिकार एक महान विश्वास का प्रकृतिक परिणाम है, मुसलमानों के अनुसार कर्म तथा सामाजिक बर्ताव का आदेश दिव्य रूप से दिया गया है। पवित्र कुरआन में है,

“बेशक अल्लाह इंसाफ का भलाई का और करीबी रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करने का हुक्म देता है और बेहयाई के कामों और बुराईयों और जुल्म से रोकता है, वह खुद तुम को नसीहत कर रहा है, ताकि तुम नसीहत हासिल करो।” (१६:९०)

प्रतिष्ठा एवं समानता

मानवाधिकार को दो बुनियादी उसूलों के तनों के रूप में देखा जाता है; प्रतिष्ठा और समानता। मानव होने के नाते प्रतिष्ठा एवं सम्मान तो हर मर्द या औरत का बुनियादी हक है।

“और बेशक हम ने आदम की औलाद को बड़ी इज़्जत दी, और उन्हें थल और जल की सवारियां दी, और उन्हें पाक चीज़ों से रिज़्क (जीविका) अता की और अपनी बहुत सी मखलूक पर उन्हें फजीलत अता की।” (१७:७०)

समानता के बारे में कुरआन की एकदम स्पष्ट आयत है कि,

“हे लोगो! हम ने तुम्हे एक (ही) मर्द और औरत से पैदा किया है और इसलिए कि तुम आपस में एक-दूसरे क पहचानो, जातियां और प्रजातियां बना दी है, अल्लाह की नज़र में तुम सब में वह इज़्जतवाला है जो सब से ज़्यादा डरने वाला है।” (४९:१३)

अर्थात, अल्लाह की दृष्टि में जो चीज़ एक इंसान को दूसरे से श्रेष्ठ बनाती है वह अल्लाह का डर और मन की शुद्धता है।

मनुष्यों का विभिन्न जातियों एवं समाजों में फैलाव अल्लाह की महानता तथा तत्वदर्शीता को दर्शाता है। मनुष्यों में जातीय अथवा शारीरिक अंतर को आपसी असमानता या भेद-भाव का कारण नहीं बनाना चाहिये। जबकि, जातीय वरीयता एवं भेद-भाव इस्लाम में हराम हैं तथा इसकी शिक्षाओं के विरुद्ध है। इसका उच्चतम उदाहरण पैगम्बर मुहम्मद (स०) के इस कथन में मिलता है: **“किसी अरब को गैर-अरब पर कोई श्रेष्ठता नहीं है, न ही कोई गोरा किसी काले से श्रेष्ठ है और न ही कोई काला किसी गोरे से। बल्कि तुम सब आदम की संतान हो और आदम मिट्टी से पैदा किए गए थे।”**

महीलाओं की समानता

अल्लाह की एक रचना के आधार पर महीलाओं को मर्दों के बराबर आध्यात्मिक समानता प्रदान की गई है। उन्हें हर प्रकार की इबादतों और दान पुन्य में बराबर का अधिकार प्राप्त है उसी तरह दुनिया में किए गए हर अच्छे बुरे कर्म का हिसाब देने में भी एक समान ज़िम्मेदारियाँ दी गई है। पवित्र कुरआन में है;

“और जो ईमानवाला हो मर्द हो या औरत और वह नेक अमल करे, बेशक इस तरह के लोग जन्नत में जायेंगे और खजूर की गुठली की फांक के बराबर भी उस का हक नही मारा जायेगा।” (४:१२४)

औरत और मर्द दोनों पर अपने परिवार एवं समाज के प्रति ज़िम्मेदारियाँ बनती है जैसा की निम्नलिखित आयत से स्पष्ट भी होता है;

“मुसलमान मर्द और औरत एक-दूसरे के (मददगार और) मित्र हैं, वे भलाईयों का हुक्म देते हैं और बुराईयों से रोकते हैं, नमाज़े पाबंदी से पढ़ते हैं, ज़कात अदा करते हैं, अल्लाह और उस के रसुल की बात मानते हैं, यही लोग हैं जिन पर अल्लाह जल्द ही रहमत करेगा, बेशक अल्लाह ग़ालिब, हिक्मत वाला है।” (९:७१)

इस्लाम के कानून के अंतर्गत औरत को जायदाद रखने और कारोबार करने का पूरा अधिकार प्राप्त है, साथ ही वह किसी भी आर्थिक लेन-देन में हिस्सा ले सकती है, वोट करने, विरासत में हिस्सा प्राप्त करने, शिक्षा प्राप्त करने तथा किसी भी तरह के कानूनी एवं राजनीतिक मामले मे हिस्सा लेने का अधिकार उसे प्राप्त है, ये वह अधिकार हैं जिन्हें इस्लाम औरतों के लिए सुनिश्चित करता है। यह एक अलग बात है कि आम तौर पर मुस्लिम समाज औरतों के इन अधिकारों को उन्हें नहीं देता इसी से समझ में आता है कि इंसान ईश्वरीय आदेशों को पूरी तरह लागू नहीं करता वरना समाज का नक्शा कुछ का कुछ नज़र आए।

जीवन तथा सुरक्षा का अधिकार

इंसान का सबसे बुनियादी अधिकार जीने का अधिकार है। पवित्र कुरआन इस अधिकार की ओर इशारा करते हुए कहता है;

“और किसी जान को जिसका मारना अल्लाह ने हराम कर दिया है कभी नाजायेज़ कत्ल न करना” (१७:३३)

“जो इंसान किसी को बिना इस के कि वह किसी का कातिल हो या धरती पर फसाद पैदा करने वाला हो, कत्ल कर डाले तो ऐसा है कि उस ने सभी लोगों को कत्ल कर दिया, और जो इंसान एक की जान बचाये उस ने मानो सभी को जिन्दा कर दिया।” (५:३२)

जीवन के बारे में इस्लाम की धारणा है कि यह अल्लाह का एक पवित्र तोहफा है।

किसी इंसान को दूसरे की जान लेने का कोई अधिकार नहीं, जब तक की अदालत इंसाफ की बुनियाद पर और दूसरे को अधिकार दिलाने के लिए ऐसा आदेश न दे। सिर्फ यही नहीं कि इंसानो की जान को कोई नुकसान न पहुँचाया जाए बल्कि उन्हें पूर्ण रूप से शारीरिक एवं दूसरी हर तरह की